पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा संचालित

४० वाँ शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर, देवलाली (महा.) में

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा संचालित 40 वाँ वीतराग-विज्ञान आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर इस वर्ष मंगलवार, दिनांक 9 मई से शुक्रवार, 26 मई 2006 तक देवलाली-नासिक (महा.) में होना निश्चित हुआ है। **इस शिविर में मुख्यरूप से धार्मिक अध्ययन करानेवाले बन्धुओं (अध्यापकों) एवं मुमुक्षु भाईयों को शिक्षण-प्रशिक्षण विधि से प्रशिक्षित किया जायेगा।**

इस अवसर पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा इन्दौर, ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, ब्र. यशपालजी जैन जयपुर, ब्र. हेमचन्दजी 'हेम', पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर आदि के प्रवचनों और कक्षाओं का लाभ प्राप्त होगा।

इनके अतिरिक्त डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनी, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन, पण्डित शैलेषभाई शाह तलोद, पण्डित अनिलकुमारजी शास्त्री भिण्ड आदि से भी सम्पर्क किया जा रहा है तथा शिक्षण-प्रशिक्षण में सहयोग देनेवाले अनेक प्रशिक्षित अध्यापक भी पधारेंगे, जिनके द्वारा बालकों, प्रौढ़ों और महिलाओं के लिये शिक्षण-कक्षाओं की व्यवस्था की जायेगी।

बालबोध-प्रशिक्षण में प्रवेश पाने के लिये बालबोध पाठमाला भाग - 1, 2, 3 की तथा प्रवेशिका-प्रशिक्षण में प्रवेश पाने के लिये वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग -1, 2, 3 की प्रवेश प्रतियोगितात्मक लिखित परीक्षा दिनांक 8 मई को दोपहर 2 बजे देवलाली में ली जावेगी, जिसमें प्रथम श्रेणी के अंक प्राप्त करना आवश्यक होगा; अत: प्रवेशार्थी उक्त पुस्तकों की पूरी तैयारी करके आवें।

ध्यान रहे, प्रवेशिका प्रशिक्षण में उन्हें ही प्रवेश दिया जायेगा, जो बालबोध प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके हैं। आपके यहाँ से कितने व कौन-कौन भाई-बहिन शिविर में पधार रहे हैं, इसकी सूचना निम्नांकित पतों पर अवश्य भेजें; ताकि आपके आवास एवं भोजनादि की समुचित व्यवस्था की जा सके।

देवलाली का पता ह्न

पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट
कहाननगर, लामरोड, बेलतगाँव रोड,
देवलाली, जि. नासिक (महा.) 422401
फोन : (0253) 2492278, 2491044

ह्न जयपुर का पता

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
श्री टोडरमल स्मारक भवन,
ए-4, बापूनगर, जयपुर (राज.)
फोन-(0141) 2707458, 2705581

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का, घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : २४ २७३ अंक : ९

चरणानुयोगसूचक चूलिका महाधिकार

आचरणप्रज्ञापनाधिकार

हे भव्यजन ! यदि भवदुखों से मुक्त होना चाहते।
परमेष्ठियों को कर नमन श्रामण्य को धारण करो।।२०१।।
वृद्धजन तिय-पुत्र-बंधुवर्ग से ले अनुमति।
वीर्य-दर्शन-ज्ञान-तप-चारित्र अंगीकार कर।।२०२।।
रूप कुल वयवान गुणमय श्रमणजन को इष्ट जो।
ऐसे गणी को नमन करके शरण ले अनुग्रहीत हो।।२०३।।
रे दूसरों का मैं नहीं ना दूसरे मेरे रहे।
संकल्प कर हो जितेन्द्रिय नग्नत्व को धारण करें।।२०४।।
शृंगार अर हिंसा रहित अर केशलुंचन अकिंचन।
यथाजातस्वरूप ही जिनवरकथित बहिर्लिंग है।।२०५।।
आरंभ-मूर्छा से रहित पर की अपेक्षा से रहित।
शुध योग अर उपयोग से जिनकथित अंतरलिंग है।।२०६।।युग्मम्।।
जो परमगुरुनम लिंग दोनों प्राप्त कर व्रत आचरें।
आत्मथित वे श्रमण ही बस यथायोग्य क्रिया करें।।२०७।।
व्रत समिति इन्द्रिय रोध लुंचन अचेलक अस्नान व्रत।
ना दन्त-धोवन क्षिति-शयन अर खड़े हो भोजन करें।।२०८।।
दिन में करें इकबार ही ये मूलगुण जिनवर कहे।
इनमें रहे नित लीन जो छेदोपथापक श्रमण वह।।२०९।।युग्मम्।।

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

अन्य वस्तु निमित्तमात्र है

पूज्यपाद आचार्य श्री देवनन्दि के प्रसिद्ध ग्रन्थ इष्टोपदेश के 35 वें श्लोक पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। मूल श्लोक इसप्रकार है ह्न

नाज्ञो विज्ञत्वमायाति विज्ञो नाज्ञत्वमृच्छति ।
निमित्तमात्रमन्यस्तु गतेर्धर्मास्तिकायवत् ।।35।।

जो पुरुष अज्ञानी अर्थात् तत्त्वज्ञान की उत्पत्ति के लिये अयोग्य है, वह विज्ञ (ज्ञानी) नहीं हो सकता और जो विशेष ज्ञानी है वह अज्ञानी नहीं हो सकता। जिसप्रकार जीव-पुद्गल की गति में धर्मास्तिकाय निमित्तमात्र है; उसीप्रकार अन्य पदार्थ भी निमित्तमात्र हैं।

(गतांक से आगे...)

अज्ञानी ऐसा कहता है कि इस गाथा को मानने पर तो '**गुरु से ज्ञान होता है**' ह्न ऐसा व्यवहारका पक्ष ढीला पड़ जायेगा; किन्तु ऐसा नहीं है। वास्तव में जिसे निश्चय प्रगट हुआ है, उसे गुरु के बहुमानादिरूप व्यवहारभाव आये बिना नहीं रहता। निश्चय के साथ व्यवहार आता ही है। जिसप्रकार स्वयं गति करते हुये जीव-पुद्गलों को धर्मास्तिकाय निमित्त है; उसीप्रकार स्वयं पुरुषार्थ करते हुये जीवों को गुरु निमित्त होते हैं। ऐसे पुरुषार्थी जीव को गुरु के बहुमान-विनय का भाव भी आता ही है।

आचार्य पूज्यपादस्वामी ने यहाँ निमित्त को धर्मास्तिकायवत् कहा है, यही इष्टोपदेश है। निमित्त से कार्य होता है और निमित्त नहीं होगा तो कार्य भी नहीं होगा ह्न यह इष्टोपदेश नहीं है।

चैतन्यहीरा चैतन्यप्रकाश से भरा हुआ है। उसके ज्ञानप्रकाश से मिथ्या अंधकार नष्ट हो जाता है। गुरु-उपदेश, मंदकषाय से मोहांधकार नष्ट नहीं होता; बल्कि ज्ञानसूर्य के प्रताप से क्षणमात्र में ही मोहांधकार नष्ट हो जाता है।

भगवान आत्मा में ज्ञान और आनंद का राज्य है तथा वीर्य अपने प्रताप से उस

साम्राज्य का बादशाह है। उस वीर्य के साम्राज्य में अन्य किसी का प्रवेश नहीं हो सकता। ह्न ऐसा ज्ञान-आनन्द-सुख-वीर्यस्वरूप प्रभु स्वयं ही है; अत: इसे बाह्य शरीरादि में सुख खोजने की कोई जरूरत नहीं है; यह जीव अपनी अज्ञानता से ही **'शरीर सुखी तो मैं सुखी'** ऐसी मिथ्याकल्पना करता है; किन्तु जिसने ज्ञानप्रदीप जलाकर ऐसी मिथ्याकल्पना का नाश कर दिया; उसे उसकी सच्ची श्रद्धा से कोई नहीं ड़िगा सकता।

जिसे अन्तरंग श्रद्धा-ज्ञान-आनन्द का जोर है, उसे बाह्य में अग्नि की वर्षा, घोर वज्रपात या निंदा का प्रहार भी विचलित नहीं कर सकता। ज्ञानी जीव स्वयं के श्रद्धा-ज्ञान और आनन्द से कभी नहीं ड़िगते। तथा जिसे अन्दर का जोर नहीं है, वे ऐसी परिस्थिति में भयभीत होकर भागने लगते हैं।

यहाँ किसी को शंका होती है कि इसप्रकार तो निमित्त का निराकरण हो जायेगा अर्थात् कार्य के होने में निमित्त की उपस्थिति न मानने का प्रसंग आयेगा।

उससे आचार्यदेव कहते हैं कि अपने हित-अहित रूप कार्य में गुरु अथवा शत्रु तो निमित्तमात्र हैं। चैतन्यप्रभु स्वयं ही अपने को शरणरूप है, हितरूप है। उसका गुरु क्या हित करें ? और अपने अज्ञानभाव से वैरभाव उत्पन्न करे तो उसे शत्रु क्या करें ? गुरु और शत्रु तो निमित्तमात्र है।

प्रकृत कार्य के उत्पाद अथवा विनाश में अन्य द्रव्य मात्र निमित्त है। वास्तव में किसी कार्य के होने अथवा बिगडने में उसकी योग्यता ही काम करती है।

पंचाध्यायी में एक श्लोक आता है, प्रत्येक द्रव्य स्वयं सत् है। स्वयं से बिगडता है और स्वयं से सुधरता है, उसे किसी पदार्थ की गरज नहीं है। बुरी संगत से बिगड़ता है और अच्छी संगत से सुधरता है ह्न ऐसा कहना तो व्यवहार मात्र है। घड़े को कुम्हार बनाता है और अच्छीतरह से न रखा जाय तो वह फूट जाता है ह्न ये सब बातें झूठ है। अपनी-अपनी योग्यता से ही सब कार्य होते हैं।

किसी भी पदार्थ के परिणमन काल में उसकी अपनी योग्यता न हो तो अन्य कोई पदार्थ उसका परिणमन नहीं कर सकता। जीव के विकारी अथवा अविकारी किसी भी भाव के कार्यकाल में जीवकी अपनी स्वाभाविक योग्यता न हो तो निमित्त

कुछ भी कार्य नहीं कर सकता है।

इस बात को सिद्ध करने में अभव्यजीव का दृष्टान्त दिया है। अभव्य जीव को कितना भी समझावें; किन्तु उसमें समझने की योग्यता ही नहीं होने से निमित्त क्या करे ? और धर्मी जीव को कोई लाखों प्रयत्नपूर्वक धर्म से डिगाना चाहे तो ड़िगा नहीं सकता है; इसलिये निमित्त कुछ भी नहीं करता; बल्कि उपादान से ही कार्य होता है। उससमय जो उपस्थित होता है, वही निमित्त कहने में आता है।

यहाँ शिष्य पुन: वही बात कहता है कि यदि आप ऐसा कहोगे तो बाह्य निमित्तों का निराकरण हो जायेगा, निमित्तों का कुछ भी प्रभाव नहीं रहेगा, फिर गुरु से ज्ञान होता है, शत्रु से नुकसान होता है ह्न यह बात ही नहीं रहेगी ? इस पर गुरु कहते हैं कि हाँ ! ऐसा ही है। गुरु से ज्ञान होता हो तो अभव्य को भी सम्यग्ज्ञान हो जाना चाहिये और निमित्त से नुकसान होता हो तो ज्ञानी को भी अज्ञानी बन जाना चाहिये, लेकिन ऐसा तो होता नहीं है।

गुरु से ज्ञान नहीं होता फिर भी गुरु की महत्ता इतनी है कि जिस शिष्य को अपने उपादान से ज्ञान होता है, उसे उस गुरु का बहुमान आये बगैर नहीं रहता। निश्चय हो तो व्यवहार आये बिना नहीं रहता - यह वस्तुस्थिति है और व्यवहार हो तो निश्चय होता है ह्न यह सिद्धान्त विरुद्ध बात है।

जीव और अजीव किसी भी पदार्थ के कार्य का सच्चा कारण एक ही होता है अर्थात् निश्चय ही सच्चा कारण है और व्यवहार आरोपित कारण है।

निमित्त भी एक पदार्थ है; किन्तु उपादान का कार्य उससे नहीं होता। प्रत्येक पदार्थ की सभी पर्यायें अपने काल में ही होती हैं, उसमें संयोगादिक किसी भी तरह का फेरफार नहीं करते । आचार्यदेव ने समय-समय की योग्यता का इतना स्पष्ट वर्णन किया है।

गुरु कहते हैं कि किसी भी वस्तु के प्रकृत कार्य में अथवा होने योग्य कार्य के उत्पन्न होने अथवा विध्वंस में बाह्य वस्तु निमित्तमात्र है।

जीव विकार करता है तो अपनी लायकात से ही करता है, उसमें कर्म निमित्तमात्र है। शरीरादि में ऑपरेशन आदि क्रिया होती है, वह उसकी उस काल

की निजी पर्याय है, उसमें छुरी, कैंची आदि साधन तो निमित्तमात्र है, उनसे ऑपरेशनरूप कार्य नहीं होता ।

वस्तुस्थिति ही ऐसी है कि उसमें अन्य कोई द्रव्य फेरफार नहीं कर सकता। वस्तु प्रतिसमय पलटती ही रहती है, उसे कोई दूसरा परिणमन कराने में समर्थ नहीं है। आत्मा और परमाणु आदि समस्त पदार्थ स्वतंत्र द्रव्य हैं । प्रतिसमय पलटना उनका स्वभाव है, वे स्वयं परिणमन करते हैं, उन्हें कोई दूसरा परिणमाने में समर्थ नहीं है।

पीछे दृष्टान्त भी आया था की पोपट को पढाने से वह पढ़ता है और बगुले को बहुत पढ़ाने से भी वह नहीं पढ़ता; क्योंकि पोपट में उस जाति की योग्यता है और बगुले में नहीं है । जगत के सभी द्रव्य स्वतंत्र हैं, उन्हें अन्य कौन परिणमायेगा ?

वस्तु कायम ध्रुवस्वरूपी रहते हुये उसमें उत्पाद-व्यय होना उसका सहज स्वभाव है। वहाँ उत्पाद भी स्वयं से स्वयं में होता है और व्यय भी स्वयं से स्वयं में ही होता है; इसलिये कहते है कि किसी कार्य के होने में अथवा बिगडने में यहाँ तक की उत्पाद-व्यय में भी उसकी अपनी योग्यता ही साक्षात् साधक है।

वस्तु में जो पर्याय होनी हो उसी ओर वस्तु की उन्मुखता होती है; दूसरी ओर नहीं। कार्य अपनी योग्यता के अनुसार ही होता है। उसमें सहकारी निमित्त होते हैं, लेकिन वे निमित्त हैं, इसलिये कार्य होते हों ह्न ऐसा नहीं है।

कोई कहता है कि तुम दूसरे को जैसा समझाते हो, वे वैसा ही समझते हैं उसमें तुम्हारा ही हेतु है, इसलिये निमित्त कुछ नहीं करता ह्न ऐसी बात भी नहीं और क्रमबद्धपना भी नहीं रहा।

उससे कहते हैं कि भाई ! वाणी, वाणी के काल में परिणमती है, आत्मा उसे नहीं परिणमाता । वाणी तो अनंत जड़ रजकणों की पिंड है, उसे आत्मा कैसे परिणमावे ? जो पुद्गल के परमाणु वाणीरूप परिणमने के उन्मुख होते हैं, उसे आत्मा कैसे रोक सकता है ? भाई ! जिसे परद्रव्य का अभिमान छूटकर स्व में समाने का मार्ग प्राप्त हुआ है, उसके लिये यह बात है। मै समझाऊँगा तो दूसरे समझेंगे, इस बात में जरा भी दम नहीं है। **(क्रमशः)**

स्वभावदर्शन और विभावदर्शन

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार की 13-14 वीं गाथा पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है।

गाथायें मूलतः इसप्रकार है ह्न

तह दंसणउवओगो ससहावेदरवियप्पदो दुविहो ।
केवलमिंदियरहियं असहायं तं सहावमिदि भणिदं ।।13।।
चक्खु अचक्खू ओही तिण्णि विभणिदं विहावदिट्ठि त्ति ।
पज्जाओ दुवियप्पो सपरावेक्खो य णिरवेक्खो ।।14।।

ज्ञानोपयोग के समान दर्शनोपयोग भी स्वभाव और विभाव के भेद से दो प्रकार का है, जो केवल इन्द्रियरहित और असहाय है। वह केवलदर्शन स्वभाव दर्शनोपयोग है।

चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन और अवधिदर्शन विभावदर्शन कहे गये हैं। पर्याय दो प्रकार की है। स्वपरापेक्ष और निरपेक्ष ।

(गतांक से आगे...)

यह दर्शनोपयोग के स्वरूप का कथन है। चैतन्य अनुविधायी परिणाम उपयोग है। उसमें से ज्ञानोपयोग का वर्णन किया जा चुका है। अब दर्शनोपयोग का वर्णन करते हैं।

ज्ञानोपयोग के समान दर्शनोपयोग भी बहुविध भेदों वाला है। वहाँ प्रथमतः उसके दो भेद करते हैं ह्न स्वभावदर्शनोपयोग और विभावदर्शनोपयोग। स्वभावदर्शनोपयोग भी दो प्रकार का है ह्न कारणस्वभावदर्शनोपयोग और कार्यस्वभाव दर्शनोपयोग।

दर्शन अथवा दृष्टि के दो अर्थ हैं ह्न (1) सामान्य प्रतिभास और (2) श्रद्धा।

जहाँ जो अर्थ घटित होता हो, वहाँ वही अर्थ समझना चाहिये। तथा दोनों अर्थ जहाँ गर्भित हों; वहाँ दोनों ही अर्थ समझना चाहिये। दृष्टि और दर्शनोपयोग दोनों निर्विकल्प होने से यहाँ टीकाकार ने उन दोनों को गर्भित कर लिया है।

कारणदृष्टि और कारण दर्शनोपयोग ह्न इन दोनों को यहाँ साथ-साथ लिया है।

कारणदृष्टि का स्वरूप बताते हुये कहते हैं कि कारणदृष्टि तो सदैव पावनरूप और औदयिक आदि चार विभावस्वभावों से अगोचर ह्न ऐसा सहज परमपारिणामिक भावरूप जिसका स्वभाव है, जो कारणसमयसाररूप है, निरावरण जिसका स्वभाव है, जो निज स्वभावसत्ता मात्र है, जो परमचैतन्यसामान्यस्वरूप है, जो अकृत्रिम परमस्व-स्वरूप में अविचल स्थितिमय शुद्ध चारित्रस्वरूप है, जो नित्य-शुद्ध-निरंजन ज्ञानस्वरूप है और जो समस्त दृष्ट पापोंरूप वीर शत्रु सेना की ध्वजा के नाश का कारण है ह्न ऐसे आत्मा के वास्तविक स्वरूप श्रद्धान मात्र ही है। (अर्थात् कारणदृष्टि तो वास्तव में शुद्धात्मा की स्वरूप श्रद्धा मात्र ही है।)

वास्तव में पारिणामिक स्वभाव ही अवलम्बन योग्य है, इसी बात को मुख्य करने के उद्देश्य से यहाँ परमपारिणामिक भाव को चार भावों से अगोचर कहा है; वास्तव में तो उपशम, क्षयोपशम और क्षायिक भावों से वह पारिणामिकभाव गोचर होता है, अगोचर नहीं है; किन्तु ये तीनों भाव क्षणिक पर्यायरूप हैं, इनके अवलम्बन से विकल्पोत्पत्ति ही होती है।

अरे भाई ! देखो तो आचार्यों की सूक्ष्मदृष्टि ! क्षायिकभाव के लक्ष्य से भी विकल्प ही उत्पन्न होता है; इसलिये उसे भी विभाव ही कहा है।

औदयिक, औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिक भावों को अपेक्षित भाव होने से विभावस्वभाव/परभाव कहा गया है। एक सहज परमपारिणामिक भाव को ही सदा पावनरूप निजस्वभाव कहा है। चार विभावभावों का आश्रय करने से परमपारिणामिकभाव का आश्रय नहीं होता। परमपारिणामिकभाव का आश्रय करने से ही सम्यक्त्व से लेकर मोक्ष तक की समस्त दशायें प्राप्त होती हैं।

जिसमें क्षायिकभाव की भी अपेक्षा नहीं ह्न ऐसे त्रिकाल, निरपेक्ष, एकरूप परमपारिणामिकभाव के आश्रय से धर्म होता है। उपशम, क्षयोपशम और क्षायिकभाव यद्यपि धर्मभाव हैं; तथापि इनके आश्रय से धर्म नहीं होता। धर्म तो परमपारिणामिक भाव के आश्रय से ही होता है; इसलिये उस परमपारिणामिकभाव का आश्रय कराने के लिये शेष चार विभावभावों से उसे अगम्य/अगोचर कहा है।

उत्पाद-व्यय रहित त्रिकाल श्रद्धा को यहाँ स्वरूपश्रद्धा कहा है। यह ध्रुवरूप है, इसे त्रिकालदर्शन भी कहते हैं तथा त्रिकालस्वरूप श्रद्धा भी कहते हैं।

यहाँ आत्मा के दर्शनोपयोग के स्वरूप का कथन है, कारणस्वभावदर्शनोपयोग में त्रिकाली श्रद्धा को भी लिया गया है।

दर्शनोपयोग के दो भेदों में स्वभावदर्शनोपयोग कारण और कार्य के भेद से दो प्रकार का है। अब उसका स्वरूप कहते हैं ह्न

कारणस्वभाव दर्शनोपयोग अर्थात् कारणदृष्टि शुद्धात्मा के स्वरूप श्रद्धानमात्र है। कैसा है शुद्धात्मा ? सदा पावनरूप, तीनों काल विकार रहित, शुद्धस्वभावरूप, औदयिक आदि चारों विभावभावों से अगोचर, सहज परमपारिणामिकभावरूप, कारण समयसाररूप, त्रिकाल निरावरण तथा निजस्वभाव सत्तामात्र परमचैतन्य सामान्यस्वरूप है।

पुन: वह आत्मा समस्त दुष्ट पापोंरूप वीर शत्रु सेना की ध्वजा के नाश का कारण है । अपनी पर्याय में जो विभाव है, वही शत्रु है। राग-द्वेष और मोह ही इस शत्रु की सेना है। शुद्धात्मा की भावना करने से उस सेना का नाश हो जाता है।

ऐसे आत्मस्वरूप के श्रद्धानमात्र कारणस्वभावदृष्टि त्रिकाल है। आत्मा में त्रिकाल वर्तते हुये दर्शन के उपयोग को कारणस्वभावदर्शनोपयोग कहते हैं।

अब कार्यस्वभाव दर्शनोपयोग का स्वरूप कहते हुये परमावगाढ़ क्षायिक सम्यक्त्वरूप जो कार्यस्वभावदृष्टि प्रकट होती है, उसे बताते हैं।

कार्यस्वभावदृष्टि त्रिकाल नहीं है, वह तो दर्शनावरण और ज्ञानावरण के क्षय से उत्पन्न होती है। यह कार्यदर्शनोपयोग अर्थात् कार्यदृष्टि अरहंतादि क्षायिक जीवों के होती है।

यह कार्यस्वभावदृष्टि सकल-विमल केवलज्ञान से तीन लोक को जाननेवाले, अपने आत्मा से उत्पन्न होनेवाले परम वीतरागसुखामृत समुद्र का पान करनेवाले एवं यथाख्यात नाम के कार्यशुद्धचारित्रस्वरूप सर्वज्ञ तीर्थंकर देव को प्रकटी हुई पर्याय है। इसप्रकार सर्वज्ञदेव को ही कार्यस्वभावदृष्टि और कार्यस्वभावदर्शनोपयोग होते हैं। **(क्रमश:)**

छहढाला प्रवचन

वीतराग-विज्ञान को नमस्कार

तीन भुवन में सार वीतराग-विज्ञानता।
शिवस्वरूप शिवकार नमहुँ त्रियोग सम्हारिकै।।1।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान दौलतरामजीकृत छहढाला पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

इस पुस्तक का नाम है छहढाला; इसमें चौपाई, पद्धरी, जोगीरासा, रोला, चाल व हरिगीत ह्न ऐसे छह प्रकार के छन्दों सहित छह ढालों में छह प्रकरण हैं; अथवा मिथ्यात्वादि शत्रुओं से आत्मा की रक्षा करने के उपाय का इसमें वर्णन है, अतः मिथ्यात्वादि से रक्षा करने के लिए यह शास्त्र ढाल समान है। पण्डित श्री दौलतरामजी ने पूर्वाचार्यों द्वारा रचित शास्त्रों का निचोड़ इसमें गागर में सागर की तरह भर दिया है। वे इसके मंगलाचरण में वीतराग-विज्ञान को नमस्कार करते हैं।

यह मंगलाचरण सोरठा छन्द में है। सौराष्ट्र का 'सोरठा' विख्यात है। शास्त्रकार इस मंगल श्लोक में अरिहंत भगवान के वीतराग-विज्ञान को नमस्कार करते हुए कहते हैं कि, वीतराग-विज्ञानरूप केवलज्ञान ही तीन भुवन में सार है ह्न उत्तम है, वह शिवस्वरूप अर्थात् आनन्दस्वरूप है और वही शिवकार अर्थात् मोक्ष का करनेवाला है। ऐसे सारभूत वीतराग-विज्ञान को मैं तीनों योगों को सावधानी से नमस्कार करता हूँ।

देखो, मांगलिकरूप से वीतराग-विज्ञान को याद किया है। चतुर्थ गुणस्थान में धर्मी को भेदज्ञान हुआ, वहाँ से वीतराग-विज्ञान का अंश प्रारम्भ हो गया है और केवलज्ञान होने पर पूर्ण वीतराग-विज्ञान प्रगट हो गया है। ऐसा वीतराग-विज्ञान ही मोक्ष का कारण है, वही जगत में उत्तम व मंगल है। राग के प्रति सावधानी छोड़कर और ऐसे वीतराग-विज्ञान के प्रति सावधान हो करके, उसका आदर करके, उसे नमस्कार करते हैं।

वीतराग-विज्ञान को नमस्कार किया, इसमें अनन्त अरिहन्त भगवन्तों को नमस्कार आ जाता है; क्योंकि सभी अरिहन्त भगवन्त वीतराग-विज्ञानस्वरूप हैं।

भले किसी एक अरिहन्त का (सीमन्धर महावीर आदि का) नाम न लिया हो किन्तु 'वीतराग-विज्ञान' कहने में सभी अरिहन्त आ गये। सभी पंच परमेष्ठी भगवन्त भी वीतराग-विज्ञानरूप हैं, अतः वीतराग-विज्ञान को नमस्कार करने में सभी पंच परमेष्ठी भगवन्तों को नमस्कार हो गया। गुण-अपेक्षा से किसी एक अरिहन्त को नमस्कार करने पर सभी अरिहन्तों को नमस्कार हो जाता है।

पण्डित श्री टोडरमलजी ने भी मोक्षमार्गप्रकाशक के मंगलाचरण में वीतराग-विज्ञान को ही नमस्कार किया है ह्न

मंगलमय मंगलकरण वीतराग-विज्ञान।
नमौं ताहि जातैं भये अरहन्तादि महान।।

मंगलमय एवं मंगल का करनेवाला ऐसा जो वीतराग विज्ञान उसे मैं नमस्कार करता हूँ ह्न कि जिसके कारण से अरिहन्तादि की महानता है। अरिहन्तादि की पूजनीयता वीतराग-विज्ञान से ही है। अरिहन्तादि का स्वरूप वीतराग-विज्ञानमय है और इस गुण के कारण से ही वे स्तुतियोग्य महान हुए हैं। वैसे तो सभी जीवतत्त्व समान हैं, किन्तु रागादि विकार से व ज्ञानादिक की हीनता से जीव निन्दा योग्य होता है और रागादि की हीनता व ज्ञानादि की विशेषता से जीव स्तुतियोग्य होता है। अरिहन्त व सिद्ध भगवन्तों को तो रागादि का सर्वथा अभाव और ज्ञान की पूर्णता होने से वे सम्पूर्ण वीतराग-विज्ञानमय हुए हैं; और आचार्य-उपाध्याय साधु को एकदेश वीतरागता तथा ज्ञान की विशेषता होने से उन्हें एकदेश वीतराग-विज्ञानता है। ह्न इस प्रकार पाँचों परमेष्ठीभगवन्त वीतराग-विज्ञानमय होने से पूज्य हैं ह्न ऐसा जानना।

वीतराग-विज्ञान तीन भुवन में साररूप है। अधोलोक, मध्यलोक या ऊर्ध्वलोक अर्थात् नरक में, मनुष्यलोक में व देवलोक में, तीनों भुवन में जीवों को वीतराग-विज्ञान ही साररूप-हितरूप है, वही सर्वत्र उत्तम है, वही प्रयोजनरूप हैं; जैसे 'समयसार' अर्थात् सर्व पदार्थों में साररूप ऐसा शुद्धात्मा, उसे समयसार के मंगल में नमस्कार किया है; वैसे यहाँ तीन भुवन में सार ऐसे वीतराग-विज्ञान को मंगलरूप नमस्कार किया है। अहो, वीतराग-विज्ञान ही जगत में सार है; वही उत्तम है, इसके सिवाय शुभराग या पुण्य वह कोई साररूप नहीं है, वह उत्तम नहीं है; राग-द्वेष रहित ऐसा केवलज्ञान ही उत्तम व साररूप है। धर्मात्मा केवलज्ञान चाहते हैं; अतः उसे याद करके वंदन करते हैं और उसकी भावना भाते हैं। **(क्रमशः)**

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : क्रमनियत शब्द का शब्दार्थ तथा भावार्थ बतलाइए ?

उत्तर : क्रमनियत शब्द में क्रम अर्थात् क्रमसर तथा नियत अर्थात् निश्चित्। जिससमय जो पर्याय आनेवाली है, वही आयेगी; उसमें फेरफार नहीं हो सकता। तीनकाल में जिससमय जो पर्याय होनेवाली है, वही होगी। जगत का कर्त्ता ईश्वर नहीं अथवा परद्रव्य का आत्मा कर्त्ता नहीं; परन्तु राग का भी कर्त्ता आत्मा नहीं है। अरे ! यहाँ तो कहते हैं कि पलटती हुई पर्याय का भी कर्त्ता आत्मा नहीं। षट्कारक से स्वतंत्रपने कर्त्ता होकर पर्याय स्वयं पलटती है, वह सत् है और उसे किसी की भी अपेक्षा नहीं है।

प्रश्न : पर्याय क्रमबद्ध स्वकाल में उत्पन्न होती है, यह बात समझ में आई; परन्तु इसीप्रकार की यही पर्याय उत्पन्न होगी ह्न यह बात इसमें कहाँ आई ?

उत्तर : पर्याय क्रमबद्ध स्वकाल में उत्पन्न होती है; इसमें पर्याय जिससमय निश्चित् होनेवाली है, वही उससमय होगी, ऐसा भी आ ही जाता है; क्योंकि स्वकाल में होनेवाली पर्याय को निमित्तादि किसी की भी अपेक्षा है ही नहीं।

प्रश्न : क्या क्रमबद्धपर्याय द्रव्य में गुंथित ही है ?

उत्तर : हाँ, क्रमबद्धपर्याय द्रव्य में गुंथी हुई ही है और इसे सर्वज्ञ भगवान प्रत्यक्ष जानते हैं। निम्नदशावालों को प्रत्यक्ष नहीं है, फिर भी उन्हें पर्याय क्रमबद्ध ही होती है ह्न ऐसा अनुमान ज्ञान से ज्ञात होता है।

प्रश्न : केवली भगवान भूत-भविष्य की पर्यायों को द्रव्य में योग्यतारूप जानते हैं अथवा उन पर्यायों को वर्तमानवत् प्रत्यक्ष जानते हैं ?

उत्तर : प्रत्येक पदार्थ की भूत एवं भविष्यकाल की पर्यायें वर्तमान में अविद्यमान अप्रकट होने पर भी सर्वज्ञ भगवान वर्तमानवत् प्रत्यक्ष जानते हैं। अनन्तकाल पहले हो चुकी भूतकाल की पर्यायें और अनन्तकाल पश्चात् होनेवाली भविष्य की पर्यायें अविद्यमान होनेपर भी केवलज्ञान वर्तमान की तरह प्रत्यक्ष जानता है।

अहाहा ! जो पर्यायें हो चुकी और होनेवाली हैं ह्न ऐसी भूत-भविष्य की पर्यायों को प्रत्यक्ष जाने उस ज्ञान की दिव्यता का क्या कहना ? केवली भगवान भूत भविष्य की पर्यायों को द्रव्य में योग्यतारूप जानते हैं ह्न ऐसा नहीं है; किन्तु उन सभी पर्यायों को वर्तमानवत् प्रत्यक्ष जानते हैं; यही सर्वज्ञ के ज्ञान की दिव्यता है।

प्रश्न : आत्मा पर में कुछ फेरफार नहीं कर सकता ह्न यह बात तो ठीक है; परन्तु अपनी पर्यायों में तो फेरफार कर ही सकता है ह्न इसका अस्वीकार क्यों ?

उत्तर : अरे भाई ! जहाँ द्रव्य का निश्चय किया, वहाँ वर्तमान पर्याय स्वयं द्रव्य में तन्मय हो गई, फिर उसे क्या फेरना ? मेरी पर्याय मेरे द्रव्य में से आती है ह्न ऐसा निर्णय करते ही पर्याय द्रव्य में अन्तर्मुख हो गई, अत: वह पर्याय अब क्रमसर निर्मल ही हुआ करती है और शान्ति वृद्धिंगत होती जाती है। इसप्रकार जहाँ पर्याय स्वयं द्रव्य में अन्तर्मग्न हुई, वहाँ उसे फेरना रहा ही कहाँ ? वह पर्याय तो स्वयं द्रव्य के वश में आ ही गई है। पर्याय आवेगी कहाँ से ? द्रव्य में से।

अत: जहाँ समूचे द्रव्य को काबू में ले लिया (श्रद्धा-ज्ञान में स्वीकार कर लिया), वहाँ पर्यायें काबू में आ ही गईं अर्थात् द्रव्य के आश्रय से पर्यायें सम्यक् निर्मल ही होने लगी। जहाँ स्वभाव का निश्चय हुआ, वहीं मिथ्याज्ञान विलीन होकर सम्यग्ज्ञान उद्भूत हुआ ह्न मिथ्याश्रद्धा पलटकर सम्यक्श्रद्धा हुई।

इसप्रकार निर्मल पर्याय होने लगीं, वह भी वस्तु का धर्म है। वस्तुस्वभाव फिरा नहीं और पर्यायों की क्रमधारा भी टूटी नहीं। द्रव्य के ऐसे स्वभाव का स्वीकार करते ही पर्याय की निर्मलधारा प्रारम्भ हो गई और ज्ञानादि का अनन्त पुरुषार्थ उसमें आ ही गया।

स्व अथवा पर किसी द्रव्य को, किसी गुण को या उसकी किसी पर्याय को फेरने की बुद्धि जहाँ नहीं रही, वहाँ ज्ञान ज्ञान में ही ठहर गया अर्थात् वीतरागी ज्ञाताभाव ही रह गया ह्न वहाँ अल्पकाल में मुक्ति होगी ही। बस ! ज्ञान में ज्ञातादृष्टापना रहना ही स्वरूप है, यही सबका सार है। अन्तर की यह बात जिसके चित्त में न आवे, उसको पर में या पर्याय में फेरफार करने की बुद्धि होती है। ज्ञाताभाव को चूककर कुछ भी फेरफार करने की बुद्धि ही मिथ्यात्व है।

महामस्तकाभिषेक महोत्सव धूमधाम से मना

श्रवणबेलगोला (कर्नाटक) : सात सौ जैन श्रमणों की साधना भूमि, विश्वप्रसिद्ध ऐतिहासिक धर्मनगरी श्रवणबेलगोला की विश्व-आश्चर्यकारी 1025 वर्ष प्राचीन गोम्मटेश्वर भगवान बाहुबली की प्रतिमा का 12 वर्षीय परंपरा का 86 वाँ एवं इक्कीसवीं शताब्दी का प्रथम महामस्तकाभिषेक पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव आदि अनेक मांगलिक कार्यक्रमों सहित दिनांक 8 फरवरी से 19 फरवरी, 2006 तक ऐतिहासिक उपलब्धियों के साथ मनाया गया ।

यह महोत्सव राष्ट्रसंत आचार्य 108 श्री विद्यानंदजी मुनिराज के मार्गदर्शन, आचार्य 108 श्री वर्द्धमानसागरजी महाराज एवं अन्य आचार्यों सहित लगभग 250 दिगम्बर संतों के पावन सान्निध्य तथा कर्मयोगी स्वस्तिश्री भट्टारक चारुकीर्तिस्वामीजी के कुशल नेतृत्व में सम्पन्न हुआ।

समारोह का उद्घाटन 22 जनवरी को महामहीम राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे.अब्दुल कलाम ने किया था। आदिनाथ पंचकल्याणक महोत्सव के अन्तर्गत दिनांक 6 फरवरी को राज्याभिषेक समारोह में महामहीम उपराष्ट्रपति भैरोसिंहजी शेखावत ने राजकुमार ऋषभदेव का राजतिलक किया।

भट्टारक चारुकीर्तिजी डॉ. भारिल्ल का सम्मान करते हुये

समारोह में कर्नाटक के मुख्यमंत्री एच.डी. कुमारस्वामी, राज्यपाल श्री टी.एन. चतुर्वेदी, उपमुख्यमंत्री श्री बी. एस. येडियूरप्प, तात्कालिक मुख्यमंत्री धर्मसिंह, श्री एम.पी. प्रकाश, श्री रेवण्णा, श्री पुट्टेगौडा आदि राजनेताओं के पदार्पण के अतिरिक्त महामस्तकाभिषेक समिति के गौरवाध्यक्ष श्री नरेशकुमारजी सेठी जयपुर, डॉ. वीरेन्द्र हेगडे धर्मस्थल, डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर आदि महानुभावों की पूरे समय उपस्थिति रही ।

महामस्तकाभिषेक में भगवान बाहुबली की प्रतिमा का प्रथम अभिषेक करने का सौभाग्य श्री अशोक पाटनी परिवार, आर.के. मार्बल्स, किशनगढ़ (राज.) को प्राप्त हुआ। इसी अवसर पर श्रवणबेलगोला में बाहुबली शिशु अस्पताल की निर्माण योजना को साकार करने के लिये आर.के. चेरिटीज द्वारा महोत्सव समिति को 1 करोड 8 लाख रुपये की आर्थिक सहायता प्रदान की गई ।

प्रतिदिन सांस्कृतिक कार्यक्रम हुये, जिसमें मुम्बई निवासी भवाई नृत्यांगना श्रीमती सीमा विनय जैन का 57 कलशों सहित कलश नृत्य हुआ। तीर्थधाम मंगलायतन, अलीगढ़ द्वारा ज्ञान-वैराग्यवर्द्धक **भरत-बाहुबली** नाटक तथा जैन विकास महिला मंडल सोलापुर द्वारा **वीर गाथा गोम्मटेश की** नाटिका प्रस्तुत की गई।

इस अवसर पर पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा विभिन्न दातारों के सहयोग से डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल द्वारा लिखित 9 पुस्तकों का एक सैट बनाकर लगभग 4.5 लाख रुपयों के 11हजार सैट नि:शुल्क वितरित किये गये। ●

ब्र. यशपालजी द्वारा धर्मप्रभावना

कुर्डूवाडी (महा.) : यहाँ दिनांक 11 से 21 फरवरी, 2006 तक शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया; जिसमें ब्र. यशपालजी जैन जयपुर के प्रतिदिन प्रात: दस करण, दोपहर में गुणस्थान व रात्रि में प्रयोजनभूत सात तत्त्वों पर मार्मिक प्रवचन हुये।

इसके अतिरिक्त दिनांक 5 फरवरी से 23 मार्च, 2006 के मध्य आपकी यात्रा के दौरान हेरले, वसगडे, कोल्हापुर, नांद्रे, मजले आदि स्थानों के लोगों को भी आपके मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला तथा बाहुबली ब्रह्मचर्याश्रम के विद्यार्थियों को कण्ठपाठ हेतु प्रेरणा दी गई एवं माढा ग्राम में डॉ. रमेश दोशी के साथ तात्त्विकचर्चा हुई।

विदाई समारोह सम्पन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक में 26 फरवरी, 06 को श्री टोडरमल दि. जैन सि.महाविद्यालय के शास्त्री द्वितीय वर्ष के छात्रों ने तृतीय वर्ष के छात्रों को भावभीनी विदाई दी।

सभा की अध्यक्षता पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल ने की। अतिथि के रूप में डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा, ब्र. यशपालजी जैन, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील, पण्डित श्रेयांसजी सिंघई, श्री राजधरजी मिश्र, श्री जितेन्द्रजी पालीवाल मंचासीन थे।

समारोह में शास्त्रीअन्तिम वर्ष के विद्यार्थियों में संभव जैन, अनिल आलमान, जितेन्द्र चौगुले, कमलेश जैन, आदित्य जैन, शाकुल जैन, अंचल जैन, शशांक जैन, विकास जैन, दीपक अथणे, विमोश जैन ने समस्त विद्यार्थियों की ओर से महाविद्यालय में व्यतीत किये पाँच वर्ष के अनुभवों एवं अपनी आगामी योजनाओं के संबंध में विचार व्यक्त करते हुये महाविद्यालय परिवार व गुरुजनों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की।

अन्त में शास्त्री अन्तिम वर्ष के विद्यार्थियों को तिलक लगाकर, माल्यार्पण, श्रीफल एवं स्मृतिचिह्न भेंटकर सम्मानित किया गया। कार्यक्रम का संचालन राहुल जैन अलवर, प्रशान्त उखलकर गोवर्धन एवं निखिल जैन कोतमा ने किया तथा संयोजन जितेन्द्र जैन मुम्बई, अनुप्रेक्षा जैन मुम्बई एवं अंकुर जैन देहगाँव ने किया। **ह्न किशोर धोंगडे**

हार्दिक शुभकामनायें

दिग.जैन महासमिति के राष्ट्रीय अध्यक्ष और विद्या विकास योजना श्रवणबेलगोला के अध्यक्ष प्रमुख जौहरी श्री विवेकजी काला जयपुर की सुपुत्री सौ. श्रद्धा का शुभ विवाह श्रीमान् सुरेशजी पाटनी (आर.के. मार्बल, किशनगढ़) के सुपुत्र चि. विकास के साथ दिनांक २३ जनवरी, २००६ को सादगीपूर्ण माहौल में सम्पन्न हुआ।

शादी के अवसर पर गुजरात के राज्यपाल श्री नवलकिशोर शर्मा एवं राजस्थान की मुख्यमंत्री वसुंधराराजे सहित राजस्थान के करीब-करीब सभी मंत्रीगण, प्रमुख जौहरी एवं जैन समाज के प्रमुख व्यक्तियों ने नव-दम्पत्ति को अपना आशीर्वाद प्रदान कर कार्यक्रम की गरिमा बढ़ाई। वर-वधु को वीतराग-विज्ञान परिवार की ओर से हार्दिक शुभकामनायें।

अनुभूति के लिए निश्चय नय आवश्यक : डॉ. भारिल्ल

नई दिल्ली (दिनांक 5 मार्च 2006) : तत्त्वज्ञान की अनुभूति एवं दु:खों से मुक्ति के लिए व्यवहार नय को छोड़कर निश्चयनय की शरण में जाना होगा अर्थात् अपनी आत्मा में रमण करना होगा, तभी कल्याण सम्भव है। ह्न यह बात सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक प्रवक्ता तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ने खारवेल सत्संग भवन, कुन्दकुद भारती के सभाकक्ष में सम्पन्न हुई कुन्दकुन्द स्मृति व्याख्यानमाला में मुख्य वक्ता के रूप में कही।

इस व्याख्यानमाला का आयोजन **पूज्य सिद्धान्तचक्रवर्ती आचार्य श्री विद्यानन्दजी मुनिराज** के सान्निध्य में श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय दिल्ली द्वारा किया गया था। डॉ. भारिल्ल ने आचार्य कुन्दकुन्दकृत समयसार में निबद्ध निश्चय-व्यवहार की सूक्ष्म विवेचना करते हुये कहा कि व्यवहार ग्रहण करना जितना आवश्यक है, उतना ही आवश्यक छोड़ना भी। आपने कहा कि यदि व्यवहार को अपनायेंगे नहीं तो लोक व्यवहार नहीं चल सकता और यदि उसको छोड़ा नहीं तो तत्त्व की अनुभूति नहीं की जा सकती। आपने अपने कथन की पुष्टि करते हुए कहा कि जिसप्रकार नदी पार करने के लिए नाव में बैठना जितना आवश्यक है, पार पहुँचने पर नाव से उतरकर उसको छोड़ना भी उतना ही आवश्यक है। यदि नाव में ही बैठे रहे तो पार करना कठिन है।

आचार्यश्री ने अपने आशीर्वचन में कहा कि 2000 वर्ष पूर्व आचार्य कुन्दकुन्द द्वारा रचित ग्रन्थ समयसार भारतीय वाङ्मय का शिरोमणि ग्रन्थ है। मनुष्य अन्न खाने से नहीं, बल्कि तत्त्वज्ञान से जीवित रहता है। वही दु:खी है, जिसके पास तत्त्वज्ञान नहीं है।

सभा की अध्यक्षता डॉ. वाचस्पति उपाध्याय ने की। पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, श्रीमती शरयूताई दफ्तरी, पद्मश्री ओमप्रकाशजी जैन, डॉ. सुदीपजी जैन दिल्ली, डॉ. अनेकान्तजी जैन दिल्ली, डॉ. सत्यप्रकाशजी जैन, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा जयपुर, पण्डित राकेशजी शास्त्री, श्री सतीशजी जैन, श्री महेन्दकुमार जैन आदि महानुभावों ने अपनी उपस्थिति से सभा को गौरवान्वित किया। डॉ. वीरसागर जैन ने संचालन एवं त्रिलोकचन्द कोठारी ने आभार व्यक्त किया।

ह्न अखिल बंसल

वार्षिकोत्सव सम्पन्न

नागपुर (महा.) : यहाँ श्री महावीर दिगम्बर जैन मंदिर का चौदहवाँ वार्षिकोत्सव दिनांक १२ से १६ फरवरी तक सानन्द सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर २० तीर्थंकर मण्डल विधान का आयोजन किया गया। प्रतिदिन प्रात: पण्डित राकेशकुमारजी शास्त्री अलीगढ़ तथा रात्रि में पण्डित विपिनजी शास्त्री श्योपुर एवं पण्डित संजयजी शास्त्री जेवर के प्रवचनों का लाभ मिला। विधान के कार्य पण्डित ऋषभजी शास्त्री छिंदवाड़ा एवं पण्डित संजयजी जेवर ने सम्पन्न कराये।

रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रम हुये। सभी कार्यक्रमों में पण्डित विनीतजी शास्त्री ग्वालियर, पण्डित रत्नेशजी मेहता, पण्डित स्वप्निलजी शास्त्री, पण्डित देवेन्द्रजी बण्ड का सहयोग मिला।

क्यों लें महाविद्यालय में प्रवेश ?

1.श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय का सन् 1977 से 28 वर्षों का गौरवशाली इतिहास है। 2. यहाँ पूर्णतः धार्मिक परिवेश होने से बालक संस्कारशील धर्मनिष्ठ बन जाते हैं। 3. डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, ब्र. यशपालजी जैन, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटिल आदि अनेक विशिष्ट विद्वानों के सान्निध्य में सतत प्रशिक्षण से जैनतत्त्वज्ञान/दर्शन के प्रकाण्ड विद्वान बन जाते हैं। 4. पूरे देश में धार्मिक अवसरों पर प्रवचन/विधान आदि कार्यों के निमित्त भ्रमण के अवसर के साथ-साथ समाज के साथ रहने का प्रायोगिक ज्ञान सीखने को मिलता है। 5.जैनदर्शन के विद्वान होने से स्व के कल्याण के साथ-साथ अपने परिवार-समाज के कल्याण में निमित्त होते हैं। 6. छात्रावास में रहने से अपने हिताहित का स्वयं निर्णय करने की सामर्थ्य प्रगट होती है। 7. यहाँ विभिन्न प्रान्तों के छात्रों के साथ रहकर पूरी भारतीय संस्कृति का परिचय प्राप्त करने का अवसर मिलता है। 8. महाविद्यालय के छात्र औसतन प्रतिवर्ष राजस्थान बोर्ड तथा विश्वविद्यालय की परीक्षाओं में मैरिट लिस्ट में स्थान प्राप्त करते हैं। 9. संस्कृत भाषा में शास्त्री (बी.ए.) की डिग्री राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय की होने से अपेक्षाकृत रोजगार के और अधिक उन्नत अवसर उपलब्ध होते हैं। 10. दर्शन व संस्कृत विषय के साथ आई.ए.एस. जैसी राष्ट्रीय प्रतियोगी परीक्षा व आर.ए.एस. आदि प्रान्तीय प्रतियोगी परीक्षाओं में उत्तीर्णता के अवसर प्राप्त होते हैं। 11. यहाँ छात्रों की वक्तृत्व शैली, तर्क शैली एवं अध्ययनशीलता का विशेष विकास होता है, जिससे छात्र अन्य क्षेत्रों में भी सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

इसप्रकार टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय में प्रवेश पाकर आपके बालक का सर्वांगीण विकास होता है। वह अपने और अपने परिवार, समाज की उन्नति में निमित्त होता है। जैनदर्शन का विद्वान बनकर स्व-पर कल्याण के सम्पादन हेतु अग्रसर होता है।

क्या आप नहीं चाहते कि आपका बालक भी ऐसा हो ? यदि हाँ ... तो महाविद्यालय में प्रवेश हेतु बालक को **दिनांक 9 मई से 26 मई 2006 तक देवलाली (नासिक) महाराष्ट्र** में आयोजित शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर में अवश्य भेजें। ●

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

31 मार्च से 5 अप्रैल, 06	**कलकत्ता**	**सिद्धचक्र विधान**
07 से 09 अप्रैल, 2006	**दिल्ली**	**गुरुदेव जयन्ती**
26 से 29 अप्रैल, 2006	**देवलाली**	**गुरुदेव जयन्ती**
09 से 26 मई, 2006	**देवलाली**	**प्रशिक्षण-शिविर**
26 मई से 18 जुलाई, 06	**विदेश**	**धर्मप्रचारार्थ**
23 जुलाई से 1 अगस्त,06	**जयपुर**	**शिक्षण-शिविर**
04 से 09 अगस्त, 2006	**लंदन**	**पंचकल्याणक**

आत्मार्थी छात्रों को अपूर्व अवसर

आत्मार्थी छात्र डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के सान्निध्य में रहकर चारों अनुयोगों के माध्यम से जैनधर्म का सैद्धान्तिक अध्ययन कर सकें तथा साथ ही संस्कृत, न्याय, व्याकरण आदि विषयों का आवश्यक ज्ञान प्राप्त करे ह्न इस महत्त्वपूर्ण उद्देश्य से जयपुर में विभिन्न ट्रस्टों के सहयोग से श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय चल रहा हैं, जिसमें लगभग 165 छात्र अध्ययन कर रहे हैं।

अबतक 385 छात्र शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण करके शासकीय एवं अर्द्धशासकीय सेवाओं में रहकर विभिन्न स्थानों में तत्त्वप्रचार की गतिविधियाँ संचालित कर रहे हैं, जिनमें से 56 छात्र जैनदर्शनाचार्य की स्नातकोत्तर परीक्षा उत्तीर्ण कर चुके हैं।

ज्ञातव्य है कि यहाँ प्रवेश पानेवाले छात्रों को राजस्थान विश्वविद्यालय की जैनदर्शन (तीन वर्षीय शास्त्री स्नातक) कोर्स की परीक्षायें दिलाई जाती हैं, जो बी.ए. के समकक्ष हैं तथा सरकार द्वारा आई. ए. एस. जैसी किसी भी सर्वमान्य प्रतियोगिता परीक्षा में सम्मिलित होने के लिये मान्यता प्राप्त हैं।

शास्त्री परीक्षा में प्रवेश के पूर्व छात्र को योग्यतानुसार दो वर्ष का राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर (राज.) का उपाध्याय परीक्षा का पाठ्यक्रम पढ़ाया जाता है जो हायर सैकेण्ड्री (12वीं) के समकक्ष है। इसप्रकार कुल 5 वर्ष का पाठ्यक्रम है। इसके बाद दो वर्ष का जैनदर्शनाचार्य का कोर्स भी है, जो एम.ए. के समकक्ष है।

उपाध्याय में प्रवेश हेतु किसी भी प्रदेश के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की सेकेण्डरी (दसवीं) परीक्षा विज्ञान, गणित, सामाजिक विज्ञान व अंग्रेजी सहित उत्तीर्ण होना आवश्यक है।

यहाँ डॉ.हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, बाल ब्र. यशपालजी जैन, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील, पण्डित संजीवकुमारजी गोधा एवं पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री के सान्निध्य में छात्रों को निरंतर आध्यात्मिक वातावरण प्राप्त होता है।

सभी छात्रों को आवास एवं भोजन की सुविधा नि:शुल्क रहती है।

आगामी सत्र 15 जून 2006 से प्रारंभ होगा। स्थान अत्यंत सीमित है, अत: प्रवेशार्थी शीघ्र ही निम्नांकित पते से प्रवेशफार्म मंगाकर अपना प्रार्थना-पत्र अंक सूची सहित जयपुर प्रेषित करें। यदि प्रवेश योग्य समझा गया तो उन्हें **देवलाली-नासिक (महाराष्ट्र) में 09 मई से 26 मई, 2006 तक** होनेवाले ग्रीष्मकालीन प्रशिक्षण शिविर में साक्षात्कार हेतु बुलाया जायेगा, जिसमें उन्हें प्रारंभ से अन्त तक (18 दिन) रहना अनिवार्य होगा।

यदि दसवीं का परीक्षाफल अभी उपलब्ध न हुआ हो तो पूर्व परीक्षाओं की अंक सूची की सत्यप्रतिलिपि के साथ प्रार्थनापत्र भेज सकते हैं। दसवीं का परीक्षा परिणाम प्राप्त होते ही तुरंत भेज दें।

देवलाली का पता –

पूज्यश्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट,
कहाननगर, लामरोड, बेलतगांव रोड
देवलाली-नासिक-422401 (महा.)
फोन - (0253) 2492278, 2492274

पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धा. महाविद्यालय,
श्री टोडरमल स्मारक भवन,
ए-4, बापूनगर, जयपुर 302015 (राज.)
फोन - (0141) 2705581, 2707458